भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में गाँधी की आर्थिक संकल्पनाः एक अध्ययन

डॉ० अनिल कुमार सिन्हा

सारांश

वस्तुतः आर्थिक क्षेत्र में उद्योगों की स्थापना, उत्पादन, विनिमय आदि पर गाँधी के विचारों का सम्यक विवेचना बताता है कि गाँधीवादी आर्थिक संकल्पना भारतीय पूँजी की रक्षा के लिए एक कारगर हथियार के रूप में प्रकट हुई थी। आर्थिक स्थितियों में आ रहे क्रमिक बदलावों के साथ-साथ उसने अपने को सामंजस्यपूर्ण ढंग से बदला और भारतीय पूँजी के पक्ष में जन-आवाम की गोलबंदी की व्यापक ब्यूह रचना किया। वास्तव में असहयोग आन्दोलन की वापसी का प्रश्न हिंसा-अहिंसा से जुड़ा हुआ कम था, बल्कि यह किसानों और जमींदारों, पूँजीपतियोंऔर मजदूरों के बीच के वर्गीय संघर्ष का मामला था, जिसमें गाँधी स्पष्टतः कृषि क्षेत्र में जमींदारों के पक्ष में खड़े हुए।

विशिष्ट शब्द : संकल्पना, साम्राज्यवाद, बहिष्कार, पूँजीपति, रियायत, रोजगार

भारतीय राजनीति में गाँधी के पदार्पण का काल वह समय था, जब उद्योग के क्षेत्र में अंग्रेजों का एकाधिकार कम हो गया था। पहले जो विश्व-बाजार में उसका दबदबा था, वह कमजोर होने लगा और नए अमेरिकी तथा यूरोपीय प्रतिद्वन्द्वियों के सामने उनका पतन दिखाई पड़ने लगा था।

साम्राज्यवादी शक्तियों का परस्पर द्वन्द्व प्रथम विश्वयुद्ध के रूप में सामने आया। गाँधी ने युद्ध के दोनों ही तरफ से लड़ने वाली शक्तियों को साम्राज्यवादी नहीं माना। सिर्फ गाँधी ही नहीं कांग्रेस ने भी 1914 से 1916 के अपने अधिवेशनों में युद्ध में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के प्रति अपनी हमदर्दी और सहयोग की वचनबद्धता दिखाई। इसी परिप्रेक्ष्य में इन अधिवेशनों में ब्रिटिश गवर्नर भाग लेते रहे और कांग्रेस इनका गर्मजोशी से स्वागत करती रही। वस्तुतः युद्ध का समर्थन करने का स्पष्ट अर्थ था- साम्राज्यवाद की उन सारी कार्रवाइयों का समर्थन करना, जो आर्थिक और राजनीतिक दोनों ही क्षेत्रों में चल रही थी। गाँधी ने युद्ध का समर्थन कर जनता से सख्ती के साथ वसूले जा रहे धन की उगाही की ब्रिटिश नीति के साथ खड़े हुए, मुनाफा कमाने के लिए जनता को भारी आर्थिक संकट में डालने वाले मुनाफाखोरों के पक्ष में खड़े दीखे और सबसे बढ़कर उस क्रांतिकारी जनता के संघर्षों के, जिसे वह युद्ध के कुपरिणामों से निजात पाने के लिए चला रही थी, खिलाफ खड़े दिखे।

स्पष्टतः यह समर्थन गाँधी ने इस कारण दिया था कि भारतीय पूँजी, जो उस काल में काफी मुनाफा कमा रही थी, निर्बाध रूप से मुनाफा कमा सके और सूती कपड़ा उद्योग, जिसमें भारतीय पूँजी का काफी प्रभाव रहा था, उसे राजनीतिक तरीकों से मदद करने की एक युक्ति भी निकाली गई थी और वह युक्ति थी- विदेशी कपड़ों के बहिष्कार की।

वस्तुतः बहिष्कार आन्दोलन ने भारतीय पूँजी को, जो सूती वस्त्र उद्योग में लगी थी, काफी मदद पहुँचाई और इस क्षेत्र में एक मजबूत राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग के उद्भव का कारण बना। इस प्रकार यह स्पष्ट दिखता है कि गाँधी के आर्थिक चिंतन में राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग के हितों की रक्षा का स्पष्ट रूप वर्तमान था और यही आर्थिक संकल्पना गाँधी के राजनीतिक आन्दोलनों की रणनीति और कार्यनीति निर्धारित करता था। राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग के स्वार्थों के साथ जहाँ कहीं भी साम्राज्यवादी स्वार्थों का टकराव होता था- गाँधी आन्दोलन का नेतृत्व

प्रधानाध्यापक, राजकीय मध्य विद्यालय, ढोली,मुजफ्फरपुर

करते थे। जन-गोलबंदी के बल पर, जिस कला में वे पारंगत थे। साम्राज्यवाद से रियायतें हासिल करते और तब आन्दोलनों का वापस ले लेते। गाँधी के आर्थिक चिंतन की यही द्वन्द्वता थी- साम्राज्यवाद के साथ संघर्ष और एकता की दोहरी नीति। इसी आर्थिक अवधारणा के तहत गाँधी ने 1919 के रौलेट बिल के खिलाफ अपने आंदोलन से मजदूर वर्ग को अलग रखा, जो युद्ध के कारण बढ़ रहे असंतोष के खिलाफ आंदोलन में उतर रहा था।

गांधी ने जिस आर्थिक संकल्पना को दार्शनिकता के स्तर तक उठाया, उसमें क्रांतिकारी आंदोलनों के समर्थन की बातें तो काफी दूर की चीजें थीं। मजदूरों के स्वास्थ्य, सामाजिक कल्याण, व्यापक जन-आवाम को रोजगार देने, उचित मजदूरी और काम की हालातों तक की बातें नहीं थी। बल्कि, ठीक इसक उल्टे बुनियादी आर्थिक परिवर्तनों के लिए संघर्ष कर रहे मजदूर आंदोलनो के ऊपर प्रतिबंध लगाने के लिए एक कारगर हथियार-अहिंसा- को लाया गया और आर्थिक सिद्धांत के नाम पर ट्रस्टीशिप के सिद्धांत को एक निहायत भोंडी संकल्पना के साथ सामने रखा गया, जिस पर धार्मिक नैतिकता का रंग चढ़ा हुआ था।

गाँधी ने अपने आर्थिक सिद्धांत का निरूपण करते हुए लिखा था कि आर्थिक समानता के लिए कार्य करने का अर्थ है- पूँजी और श्रम के बीच निरंतर टकराव को कम करना। जहाँ तक पूँजीपति और श्रमिक के बीच संबंध की बात है, गाँधी ने कहा था। मैंने हमेशा यह कहा है कि मेरा आदर्श यह है कि पूँजीपति और मजदूर एक-दूसरे के पूरक और सहायक की तरह काम करें। उन्हें एक बड़े परिवार की तरह रहना चाहिए जिसमें एकता और मेल-जोल कायम रहे। पूँजीपति न सिर्फ मजदूरों के भौतिक कल्याण बल्कि, नैतिक कल्याण की भी देख-रेख करे और पूँजीपति अपने नीचे काम करने वाले मजदूरों की भलाई के लिए न्यासधारी बनकर रहे। गाँधी द्वारा इस ट्रस्टीशिप की आर्थिक अवधारणा का आधार था 1914-18 के युद्ध के दौरान ब्रिटिश सरकार की औद्योगिक नीति में परिवर्तन आया। गाँधी ने देखा था कि किस तरह मजदूरों का वर्गीय आंदोलन शोषण के खिलाफ परवान चढ़ता जा रहा था और एक के बाद एक आंदोलन हो रहे थे।

ब्रिटिश सरकार की यह घोषणा भारतीय पूँजीपति वर्ग के लिए काफी उम्मीद वाली थी कि भारत का औद्योगीकरण अब सरकार करेगी और इन्हें इसका भरपूर लाभ मिलेगा। इस ब्रिटिश नीति ने एक बार फिर भारतीय राष्ट्रीय पूँजी और ब्रिटिश साम्राज्यवाद के परस्पर हितों को एक साथ जोड़ दिया था-एक औद्योगिक भारत की महान शक्ति को दोनों ही अपने लिए लाभकारी मान रहे थे। इस नीति के सफल कार्यान्वयन के लिए औद्योगिक शांति की जरूरत थी, जंब कि मजदूर आन्दोलित थे। भारत के बाजार पर अन्य यूरोपीय देशों का हमला हो रहा था, जो ब्रिटिश वर्चस्व को कम कर रहे थे। गाँधी का अहिंसा क्रांतिकारी उभाड़ को रोकने वाला कारक था, तो दूसरी तरफ युद्ध-जनित हालात में अकूत मुनाफा बटोर रही पूँजी की सुरक्षा और उसके खिलाफ वर्गीय संघर्ष की भावना को न्यासवाद ने कुंठित किया। दूसरी तरफ, गाँधी द्वारा माण्टेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारों को इसी आधार पर समर्थन दिया गया कि वे भारत के औद्योगीकरण की नीति के वाहक थे। गाँधी ने लिखा, सरकारी घोषणा के साथ सुधारों से संबंधित जो कानून पास हुआ है, उससे पता चलता है कि अंग्रेज भारत के साथ न्याय करना चाहते हैं, इसलिए हमारा कर्तव्य यह है कि सुधारों की अकारण आलोचना न करके चुपचाप उनके अनुसार काम करना शुरू करें ताकि इन सुधारों को सफलता मिल सके। सुधारों का वह लक्ष्य जो भारत को एक औद्योगिक देश में रूपान्तरित करने की घोषणा करता था, उसके अनुसार, 'चुपचाप काम करने' का एकमात्र मकसद था कि भारतीय पूँजी-घोाणा की नीति का लाभ उठाएं ओर अपना विकास औद्योगिक क्षेत्र में करें।

गाँधी ने यह बखूबी समझा था कि भारत को एक औद्योगिक राष्ट्र बनाने की घोषणा और प्रयास, चाहे इनका

लक्ष्य साम्राज्यवाद जो भी रखा हो, में भारतीय पूँजी ओर साम्राज्यवादी पूँजी का टकराव कहाँ था ? औद्योगिकीकरण के लिए भारत पहुँच रहे ब्रिटिश की तुलना में भारती पूँजीपतियों की स्थितियाँ काफी कमजोर थी और भारतीय पूँजी, पूँजी प्रधान उद्योगों में साम्राज्यवादी पूँजी का मुकाबला नहीं कर सकती थी और श्रम प्रधान उद्योगों में उत्पादित माल ब्रिटिश पूँजी द्वारा मशीनों से किए जाने वाले उत्पादनों की प्रतिस्पर्द्धा में बाहर हो जाती। गाँधी ने इन दोनों से भारतीय पूँजी का बचाव करते हुए भारत की पूँजी के पक्ष में, जो छोटी ओर कमजोर थी, आयातित ब्रिटिश पूँजी की तुलना में मशीनीकरण का विरोध और घरेलू उद्योगों पर आधारित अर्थव्यवस्था की संकल्पना को रख कर किया तथा उनके द्वारा उत्पादित मालों के लिए बाजार की गारंटी कराने के लिए विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार का आन्दोलन चलाया।

गाँधी का ऐसा आर्थिक संकल्प एक खास वस्तुगत स्थिति पैदा होने के संदर्भ को देखते हुए आया था। युद्ध और युद्ध के बाद के अशान्त वर्षों में, जब मजदूर आन्दोलन एक खास उचाई को छूने लगा था, तब भारत पर अपना नियंत्रण बनाए रखने के लिए अंग्रेजी राज के लिए यह जरूरी हो गया था कि वह भारतीय पूँजीपतियों को अपने पक्ष में करने के लिए कुछ आर्थिक और राजनीतिक रियायतें दें और इसकी घोषणा करें। मजदूर आन्दोलन का जो दौर चल रहा था, उसको अहिंसा की नीति के तहत शामिल करते हुए गाँधी ने उनका नेतृत्व किया और उसे क्रांतिकारी आन्दोलन के रूप में परिणत हो जाने के क्रम को अहिंसा के तथाकथित सैद्धांतिकता के तहत रोका। 1922 के फरवरी में जब यह आंदोलन अपनी ऊँचाई पर जो साम्राज्यवाद विरोध की उस क्रांतिकारी लहर के साथ, जिसे-विश्व-मुक्ति संघर्ष की क्रांतिकारी चेतना उद्भूत कर रही थी, मिलने का प्रयास कर रहा था तब बिना शर्त आन्दोलन वापस ले लिया। इस तरह जन-आन्दोलन का वह बड़ा सैलाब अब अवरूद्ध हो चुका था और उसके लिए भारतीय पूँजीपति वर्ग को रियायतें का जो दौर ब्रिटिश सरकार ने चलाने का वादा किया था वह 1921 में रक्षात्मक शुल्क-व्यवस्था के विकास के तरीकों में आने लगा था।

गाँधी के आर्थिक चिन्तन की विडम्बना यह रही कि रियायतों को हासिल करने के जो मूल प्रभावकारी तत्व रहे थे- मजदूरों के आन्दोलन, उसे एक बार स्थगित कर देने के बाद गाँधी के राजनीतिक दबाव का आधार ही खिसक गया। साम्राज्यवाद अपने असली रूप में पुन: उस समय वापस आ गया, जब आन्दोलनों की वापसी से व्याप्त हतोत्साहिता का वातावरण व्याप्त हो रहा था। अत: 1927 में जब संरक्षणात्मक प्रणाली के शुल्क के नवीकरण का समय आया, तब सरकार ने उन रियायतों को वापस कर लिया, बुनियादी शुल्कों में कमी की गई और आर्थिक सहायता समाप्त कर दी गई। सबसे आश्चर्यचकित करने वाला एक नया सिद्धांत लाया गया, यह ब्रिटेन से आने वाले माल पर शुल्क लगाने में रियायत बरतने का सिद्धांत था। यह अब आम बात बन गई थी और 1930 तक शाही सामानों के साथ रियायत बरतने के दायरे में सूती कपड़े के बने सामान भी आ गए थे।

अब भारतीय पूँजी का नया संघर्ष ब्रिटिश पूँजी के साथ शुरू हो गया था, जिससे प्रतिरक्षात्मक शुल्क प्रणाली का उपयोग ब्रिटिश पूँजी के हित में किया जा रहा था। इस संघर्ष में गाँधी मशीनीकरण के खिलाफ थे, क्योंकि विदेशी इजारेदार पूँजी भारत के औद्योगिक विकास के लिए गंभीर खतरा बन गई थी। स्वावलंबी ग्राम-व्यवस्था के पक्ष में और मालिक-मजदूर सहयोग के दर्शन को आधार बनाते हुए स्वतंत्रता आंदोलन की आर्थिक दिशा को निर्धारित करने का प्रयास किया।

गाँधी का यह गैर-मशीनवाद उस काल में भारतीय आर्थिक तंत्र में विदेशी मशीनों द्वारा उत्पादित मालों के आक्रमण के खिलाफ भारतीय पूँजी को समर्थन देने वाला, तर्कसंगत दलील दिख रहा था और भारतीय पूँजी ने इसका समर्थन भी किया। भारत के बाजार पर ब्रिटिश निर्माताओं की ही सबसे बड़ी इजारेदारी थी ओर जब भारतीय मालों के लिए संरक्षण की मांग की जाती थी,

तब स्पष्टतः यह संरक्षण ब्रिटिश मालों के खिलाफ होता था। दूसरी तरफ ब्रिटिश पूँजीवाद ने भारत में सीमा-शुल्क की इच्छा इसलिए जाहिर की थी कि भारत के बाजार को अन्य प्रतियोगियों से बचाया जा सके। इस प्रकार यहाँ के हितों में टकराहट थी।

भारतीय माल को संरक्षण देने संबंधी विधान सभा द्वारा पारित प्रस्तावों को वायसराय द्वारा निरस्त किए जाने की स्थिति में गाँधी ने साम्राज्यवाद विरोधी अपनी सीधी कार्रवाई में चरखा और खादी को खड़ा किया। मगर आर्थिक संरचना के उस पक्ष का विश्लेषण, जिसके कारण यह स्थिरता आई है, उसे गाँधी सही नहीं करते। इनका विश्लेषण उन पुरानी कांग्रेसियों से भी जिनकी वैचारिकता का नेतृत्व दादा भाई नौरोजी ने किया था और स्थापित करने का प्रयास किया था कि भारत की दरिद्रता के कारण साम्राज्यवाद नहीं, बल्कि भारत की संपत्ति के बहाव को इंग्लैंड की तरफ कर देने की कार्रवाइयाँ और भारत में आधुनिक उद्योगों के वकास की प्रक्रिया को अवरूद्ध करके रखे जाने की नीतियाँ हैं, भिन्न राय रखते हैं। ठीक इसके उल्टा गाँधी स्थापित करते हैं कि आधुनिक मशीनें भारत की दरिद्रता का प्रमुख कारण है। गाँधी यह विभाजक रेखा भी नहीं खींचते हैं कि साम्राज्यवाद के स्वामित्व वाली आधुनिक मशीनें भारत का शोषण करती हैं। इस तरह की आर्थिक स्थापनाओं का एक उद्देश्य था कि साम्राज्यवाद के साथ आगे के दिनों में रियायतें हासिल करने का मौका न समाप्त कर दिया जाय, क्योंकि साम्राज्यवाद का असमझौतावादी विरोध एक ऐसे संघर्ष को जन्म देता, जहाँ रियायतों को हासिल करने की गुंजाइश नहीं बचती।

चरखों की अहमियत अति अल्प पूँजी की स्थिति में भी रोजगार को बढ़ाने का एक साधन हो सकता था, और गाँधी की इस स्थापना की समीचीनता को स्वीकार किया जा सकता है। फिर भी, यह नहीं भुलाया जा सकता कि मशीनीकृत उत्पादन, जो मात्रात्मक दृष्टि से काफी बड़ा था और राष्ट्रीय सीमाओं को लाँघ कर बड़े पैमाने पर विनिमय की प्रणाली वाला एक अर्थतंत्र खड़ा कर दिया था, उसकी प्रतिस्पर्धा में चरखा की अहमियत नगण्य थी। इसका स्पष्ट मतलब था भारत के बाजारों में विदेशी वस्तुओं के प्रवेश को अप्रत्यक्ष रूप से मौका देना। हालांकि, कालान्तर में गाँधी ने अपनी आर्थिक संकल्पनाओं में थोड़ा परिवर्तन लाया और उद्योगवाद का उनका प्रतिबद्ध विरोध थोड़ा ढीला पड़ता नजर आया। उन्होंने कहा, "मैं चाहता हूँ कि मिलों या व्यवसाय फले-फूले, किंतु वह देश की कीमत पर नहीं।" यहाँ मशीनीकृत उत्पादन का जो स्वरूप गाँधी ने रखा वह भारतीय पूँजीपतियों के हित को ध्यान में रखा गया था और भारी उद्योगों का एकतरफा विरोध को छोड़ दिया गया था।

वस्तुतः आर्थिक क्षेत्र में उद्योगों की स्थापना, उत्पादन,विनिमय आदि पर गाँधी के विचारों का सम्यक विवेचन बताता है कि गाँधीवादी आर्थिक संकल्पना भारतीय पूँजी की रक्षा के लिए एक कारगर हथियार के रूप में प्रकट हुई थी। आर्थिक स्थितियों में आ रहे क्रमिक बदलावों के साथ-साथ उसने अपने को सामंजस्यपूर्ण ढंग से बदला और भारतीय पूँजी के पक्ष में जन-आवाम की गोलबंदी की व्यापक ब्यूह रचना किया। वास्तव में असहयोग आन्दोलन की वापसी का प्रश्न हिंसा-अहिंसा से जुड़ा हुआ कम था, बल्कि यह किसानों और जमींदारों, पूँजीपतियों और मजदूरों के बीच के वर्गीय संघर्ष का मामला था, जिसमें गाँधी स्पष्टतः कृषि क्षेत्र में जमींदारों के पक्ष में खड़े हुए।

विडम्बना यह थी कि गांधी, जो अपने समस्त आर्थिक चिंतन में स्वावलंबी ग्राम व्यवस्था की हिमायत करते रहे, मगर उन स्वावलंबी ग्रामों में भूमि के स्वामित्व की जो सामूहिक स्वामित्व वाली प्रणाली थी, उसको मानने से इनकार कर दिया। यही उनका वह वर्ग दृष्टिकोण था जो उन्हें जमींदारों के पक्ष में खड़ा कर देता है। उद्योग के क्षेत्र में तो बहिष्कार आंदोलन भारतीय पूँजी के पक्ष में जाता था और गाँधी ने उस आंदोलन को चलाया, मगर कृषि के क्षेत्र में भू-प्रबंधन

का वह विदेशी तरीका, जिसे चिरस्थाई प्रबंध के द्वारा भारतीयों पर लादा गया, उसके पक्ष में गाँधी खड़े हुए, क्योंकि वह उनके चिंतन में उसका विरोध भारत के जमींदारों के खिलाफ जाता था। इस तरह अहिंसा पर आधारित गाँधीवादी आर्थिक दर्शन व्यवहार में मूलतः हिंसा पर आधारित सामाजिक व्यवस्था का पक्षधर था और भारत में अहिंसा का उपयोग दोनों ही मोर्चों पर साम्राज्यवाद के विरुद्ध और किसान मजदूर आन्दोलनों तथा उदीयमान समाजवादी आर्थिक व्यवस्था के खिलाफ भी इसका जमकर प्रयोग किया गया।

जमीन्दारों और पूँजीपतियों को, किसानों और मजदूरों का न्यासधारी बनाने का सिद्धांत उनको शोषण कर दैवी अधिकार प्रदान करनेवाला बन जाता था। इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता था कि ये तथाकथित न्यासधारी अपने वर्तमान स्थान पर किसी खास वैयक्तिक गुण या सेवा के कारण नहीं पहुँचे थे, बल्कि धोखाधड़ी, लूट खसोट और छल-प्रवंचना ही उनका हथियार रहा था। इस कारण राजनीतिक रंगमंच पर आने वाली प्रगतिशील शक्तियों ने गाँधीवादी ट्रस्टीशिप सिद्धांत को प्रतिक्रियावादी माना और उसका विरोध किया। वास्तविकता यही थी कि यह यथास्थितिवाद की कल्पना करता था और क्रांतिकारी बदलाव का विरोधी था। कृषि संबंधी विकास की समूची समस्या से निबटने के लिए जरूरी था कि राष्ट्रीय आन्दोलन भूमि के पुनर्वितरण की माँग को आगे लाता। इसके लिए सबसे जरूरी था कि कृषि में तकनीक की आधुनिक स्तर तक लाए जाने की मांग उठती।

निष्कर्ष :

गाँधी की सफलता का कारण वास्तव में यह नहीं था कि उन्होंने बुद्धिमानीपूर्वक राष्ट्रीय आन्दोलन को चलाया, बल्कि साम्राज्यवाद विरोधी आन्दोलन की विचार धारा के रूप में गाँधीवाद ऐसी आर्थिक सामाजिक परिस्थितियों में उदित हुआ था जब मजदूरों और किसानों में पर्याप्त मात्रा में वर्ग-चेतना नहीं फैली थी। मध्ययुगीन विचारधारा के धार्मिक-नैतिक सिद्धांत तथा अन्य अवशेष अब भी जनता के बड़े हिस्सों को प्रभावित कर रहे थे। ठीक इसी परिस्थिति में भारत का राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग गाँधी की विचारधारा और गाँधी को भी अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए इस्तेमाल करता रहा। इस तरह आर्थिक संकल्पना की गाँधीवादी अवधारणा भारत के राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग की आर्थिक अवधारणा बन कर रह गई। इसकी अवैज्ञानिकता का ऐसा प्रभाव पड़ा कि आज भी भारत की कृषि-समस्या जटिल बनी हुई है। उद्योगों में उत्पादन का समन्वय नहीं है, बेरोजगारी है और करीब आबादी का एक-चौथाई भाग निर्धनता रेखा के नीचे जी रहा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. माण्टेग्यू-चेम्सफोर्ड रिपोर्ट, 1918, पृ.267
2. कांग्रेस कार्य समिति का बारदोली में पारित प्रस्ताव, 12 फरवरी, 1922
3. एम.के.गाँधी : सोशलिज्म ऑफ माई कन्सेप्शन
4. डॉ० दिनेश कुमार, भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन एवं राजनीतिक अन्तर्द्वन्द्व 1885-1947
5. डॉ० कमल प्रसाद बौद्ध, 2010, शिक्षा दर्शन एवं समाज का नूतन आयाम, पृ. 226.228
6. आईडियल रिसर्च रिव्यू, पटना,मार्च 2013,वाल्यूम 37 अंक-1, पृ. 59
7. वेद प्रकाश वर्मा, महात्मा गाँधी का नैतिक दर्शन दिल्ली : बी0 एल0 प्रिंटर्स, 1979, पृष्ठ 142
8. प्रताप सिंह, गाँधीजी का दर्शन, जयपुर रिसर्च पब्लिकेशंस, 1988, पृष्ठ 44
9. कृपलानी, महात्मा गांधी जीवन और चिंतन, पृष्ट सं0.10-394-95